REVIEW OF RESEARCH
ISSN: 2249-894X
IMPACT FACTOR : 5.2331(UIF)
VOLUME - 7 | ISSUE - 5 | FEBRUARY - 2018

राजनीतिक अपराधीकरण एवं राष्ट्रीय अखंडता

डॉ० अंजीत कुमार चौधरी
बी०ए०, एम० ए० (राजनीति विज्ञान), पी–एच० डी०
ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय, दरभंगा.

भूमिका

राजनीति के अपराधीकरण का पहला शिकार प्रशासन और पुलिस बने, इसके परिणामस्वरूप कानून की एक व्यवस्था तैयार हुई जो न तो ईमानदार है और न निष्पक्ष। पुलिस सेवा की नैतिकताएं ताक पर रख दी जाती हैं और इसकी वजह से सुव्यवस्थित अपराध के विकास को प्रोत्साहन मिलता है, खासतौर से बंबई और दिल्ली जैसे शहरी क्षेत्रों में। अब परंपरागत अपराध जैसे–(1) उठाईगिरी, (2) चोरी, (3) सेंधमारी, (4) छीना झपटी और (5) डकैती के दिन लद गए हैं जबकि पहले इन्हीं अपराधों का मुकाबला करना होता था। आज श्संगठित अपराधश पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है। इनमें जबरन वसूली (व्यापारियों, बिल्डरों और अब तो फिल्म निर्माताओं से भी), फिरौती के लिए अपहरण, शहरी संपत्ति को जबरन हथियाना और बेचना, मादक द्रव्यों का व्यापार, हथियारों की तस्करी और जघन्य हत्याएं।

भारतीय प्रशासनिक सेवा के सेवानिवृत्त सदस्य और एक कर्मठ अफसर माधव गोडबोले ने अपनी पुस्तक अनफिनिश्ड इनिंग्स में वोहरा रिपोर्ट को बेमानी बताया है और कहा कि इसमे शायद ही कुछ नया है। उन्होंने काफी हताश होकर केंद्रीय गृह सचिव के पद से इस्तीफा दे दिया थ। असल में उन्होंने जो लिखा वह इस प्रकार है, विशेष बात तो यह है कि जो महत्वपूर्ण है वह इसमें (रिपोर्ट में) नहीं है। जटिल मुद्दों की चर्चा ऐसे सरसरी तौर पर नहीं की जा सकती है।

स्वभाविक तौर पर, यह रिपोर्ट ठंडे बस्ते में ही पड़ी रही। कुछ वर्षों बाद इस रिपोर्ट की प्रति संसद में पेश करने की मांग पर हंगामा खड़ा हुआ। लोकसभा के पूर्व अध्यक्ष रबी राय के अनुसार, संहेहास्पद परिस्थितियों में यह रिपोर्ट संसद में पेश की गई ताकि लोगों का ध्यान नयना साहनी हत्याकांड से हटाया जा सके। इसमें सत्ताधारी पार्टी का एक कार्यकर्ता शामिल था लगता है कि वोहरा समिति को दी गई शीर्षस्थ राज नेताओं और माफिया की साठ–गांठ का पर्दाफाश करने वाली कुछ महत्वपूर्ण रिपोर्ट को पूरी तरह नजरअंदाज कर दिया गया है। इसका एक हिस्सा अब अनौपचारिक तौर पर दिल्ली मे विविध लोगों के बीच चक्कर काट रहा है। इनसे कुछ चौंकाने वाले तथ्य सामने आते हैं, उनमें से कुछ की चर्चा यहां प्रस्तुत कर रहे है–

- इसमें मूल चंद सम्पत राजशाह उर्फ मूलचंद, उर्फ चोकसी, निवासी, 604 रजिन्दर विहार, ग्विल्डर लेन, वेलिंगटन रोड, बंबई की चर्चा की गई है। उसने 1980 में ही दाउद इब्राहिम से घनिष्ट संबंध बना लिया था और वह बंबई में कई महत्वपूर्ण लोगों से पैसा लेकर मध्यपूर्व व अन्य देशों में सुरक्षित रखने के लिए भेजता था। इसमें एक पूर्व मुख्यमंत्री के 20–50 करोड़ रूपए भी शामिल थे।
- मार्च 1989 में मूलचंद के खिलाफ कोफेपोसा में बंदी बनाने के आदेश जारी किए गए। मई 1990 में महाराष्ट्र के

गृह विभाग के एक राजनीतिज्ञ ने इसे रद्द कर दिया था, कथित रूप से दो करोड़ रूपये के एवज में।

- मुंबई पुलिस ने अप्रैल 1991 में मूलचंद को गिरफ्तार कर लिया था। उसे मुंबई में 17 अप्रैल 91 को विशेष अदालत में पेश किया गया। वह 24 अप्रैल 1996 तक पुलिस हिरासत में रहा। सीबीआई की पूछताछ में मूलचंद ने कथित रूप से यह दावा किया कि उसे अधिक समय तक हिरासत में नहीं रखा जा सकता और इसी संदर्भ में उसने अपने ऊंचे राजनीतिक संबंधों की चर्चा की।
- मार्च 1993 में बंबई में हुए बम कांड के बाद मूलचंद फिर आतंकवादियों और अंडरवर्ल्ड को वित्तीय सहायता देने के लिए संदेह के घेरे में आया। बंबई सीआईडी की अपराध शाखा के डीआईजी ने 4 मई 1993 को उसे गिरफ्तार किया और आखिरकार उसे टाडा के तहत उसे न्यायिक हिरासत में रखा गया।
- रिपोर्ट में इस बात की पुष्टि की गई है कि मूलचंद का राजनीतिज्ञों और नौकरशाहों में खास दबदबा था। इसकी वजह से और पैसे की उसकी ताकत के कारण राजस्व खुफिया निदेशालय, प्रवर्तन निदेशालय और सीमा शुल्क विभाग गिरफ्तारी के बाद उससे लंबी पूछताछ नहीं कर सका।
- ईस्ट– वेस्ट एअरलांस भी ईस्ट–वेस्ट ट्रैवल एंड ट्रेड लिंक्स लिमिटेड, बंबई की सहायिका है। इसके चेयरमैन बहरीन में रहने वाले अनिवासी भारतीय हैं। दाउद इब्राहिम से इनके घनिष्ट संबंध थे। खबर थी कि जनता दल के एक नेता ने ईस्ट–वेस्ट एयरलाइंस के लिए उसी के एक निदेशक के जरिए वित्तीय व्यवस्था करने में बिचौलिए का काम किया था। आरोप है कि एक कैबिनेट सचिव ने देना बैंक, इलाहाबाद बैंक आदि से पैसा प्राप्त करने में मदद की थी।
- समझा जाता है कि एक पूर्व प्रधानमंत्री के निजी सचिव रह चुके उनके एक नजदीकी व्यक्ति ने पैसे जुटाने में कथित रूप से ईस्ट–वेस्ट एयरलाइंस की मदद की और यह पैसा प्रधानमंत्री के करीबी लोगों से जुटाया गया है इनमें खासतौर से एक ऐसे मंत्री भी शामिल थे जो रिपोर्ट तैयार होते समय यानी 1993 में केन्द्र सरकार में थे। यह भी पाया गया कि एक पूर्व प्रधानमंत्री के एक महत्वपूर्ण सलाहकार ने भी दाउद इब्राहिम और उसके गिरोह से ईस्ट–वेस्ट एयरलाइंस के लिए धनराशि का इंतजाम करने के लिए बिचौलिए का काम किया था।
- रिपोर्ट थी कि उस्मान गनी नामक एक व्यक्ति दुबई में विदेशी मुद्रा विनिमय का फलता–फूलता व्यापार चलता था। उसने जिन लोगों के लिए यह काम किया उसमें चोटी की कई फिल्मी हस्तियां और बंबई के एक शीर्षस्थ राजनीतिज्ञ का एक नजदीकी वकील भी शामिल था। उस्मान गनी बंबई बम कांड के षडयंत्र में भी शामिल था।
- दाउद इब्राहिम ने बंबई में सन एन सैंड होटल के करीब जमीन खरीदने के लिए दिल्ली के एक राजनैतिक कार्यकर्ता को 3 करोड़ रूपये दिए थे। यह कार्यकर्ता एक समय एक पूर्व प्रधानमंत्री के काफी करीब था।

देश जानना चाहता है कि बहुप्रचारित वोहरा समिति ने इन सनसनीखेज सूचनाओं का क्या किया और बाद में क्या ठोस कार्रवाई की गई, ओर क्या इन सभी मामलों में आगे कोई और छानबीन की गई। वोहरा समिति की रिपोर्ट की सिफारिशों के बावजूद जब कोई मध्यस्थ एजेंसी की स्थापना नहीं की गई तो उचित कार्रवाई की क्या उम्मीद की जा सकती है, खासतौर से तब जब शीर्षस्थ हस्तियों के खिलाफ गंभीर आरोप कानून लागू करने वाली विभिन्न एजेंसियों के पास बरसों धूल चाटती रही और यह सब तब प्रकाश में आया जब सर्वोच्च न्यायालय ने इसमें दखल दिया। सरकार को कार्रवाई के लिए मजबूर करने के लिए सितंबर 1997 में भी ऐसी ही एक दखल की जरूरत पड़ी थी। न्यायालय के निर्देशानुसार, सरकार ने एक तीन सदस्यीय समिति बनाई जिसके चेरमैन प्रधानमंत्री के प्रमुख सचिव वही एनएन वोहरा थे। पूर्व कैबिनेट सचिव बीजी देशमुख और केंद्रीय सतर्कता आयुक्त एमवी गिरि को सदस्य नियुक्त किया गया। सर्वोच्च न्यायालय ने मार्च 1997 में ही एक उच्च स्तरीय समिति की स्थापना का आदेश दिया था। आश्चर्य है कि कोई सीबीआई प्रमुख या अन्य गुप्तचर या कानून लागू करने वाली एजेंसी का कोई सदस्य और पेशेवर इस समिति से नहीं जुड़ा था।

एक वर्ष बाद अगस्त 1995 में केन्द्र ने एक बेहतरीन रिपोर्ट दी। इसमें कार्रवाई और रोकथाम के उपायों की अत्यंत व्यवहारिक और कारगर सिफारिशें थीं।

कई कारणों से रिसर्च सेंटर की रिपोर्ट उल्लेखनीय थी। इसमें वर्धा, हाजी मस्तान, युसूफ पटेल, दाउद इब्राहिम, राम नायक, ओम प्रकाश श्रीवास्तव उर्फ बबलू श्रीवास्तव, अरूण गवली आदि जैसे कुछ कुख्यात

आपराधिक गिरोहों के विकास की ऐतिहासिक पृष्ठिभूमि की छानबीन की गई थी। रिपोर्ट में राजनीतिज्ञों से उनकी साठ–गांठ का विवरण था। इसमें जो कुछ कहा गया उससे वोहरा समिति की रपटों के तथ्यों की पुष्टि होती है।

शीर्षस्थ राजनीतिज्ञों और अपराधियों की साठ–गांठ के कुछ कथित उदाहरणों की चर्चा तो खुलकर अखबारों मे भी की गई। एक अखबार में शीर्षक था, ठाकुर का कहना है कि गिरफ्तारी से पहले शेखर से मिला था। उसे कथित रूप से राजधानी में एनटीपीसी के गेस्ट हाउस में रहने की जगह दिलाई गई थी। इंडियन एक्सप्रेस को दिए एक साक्षत्कार में गैंगस्टर सुभाष सिंह ठाकुर ने बतया कि अपने आत्मसमर्पण की व्यवस्था करवाने के लिए वह अपने गिरोह के सदस्य के साथ चंद्रशेखर से मिला था। इससे पहले वह उनके लिए चुनाव प्रचार कर चुका था। उसने दावा किया कि यह बात उसेन सीबीआई को भी बताई थी। यह दिलचस्प है कि चंद्रशेखर के राजनीतिक सचिव एचएनशर्मा ने 11 अगस्त 1993 को ही एक बयान में बताया था कि ठाकुर ने वासतव में फरवरी 1992 में पूर्व प्रधानमंत्री के लिए चुनाव प्रचार किया था और यह भी कि ठाकुर व उसके साथी चंद्रशेखर से उनके भोंडसी आश्रम में मिले थे। बयान इस प्रकार था रू श्मुझे पता चला है कि इनलोगों ने पूर्व प्रधानमंत्री के साथ बंबई पुलिस के पुराने मामलों की चर्चा की थी और वे बंबई पुलिस के समक्ष समर्पण करने के लिए चंद्रशेखर की मदद चाहते थे। उन्होंने यह भी कहा था कि पूर्व प्रधानमंत्री ने ही उन्हें बंबई पुलिस के समक्ष समर्पण करने की सलाह दी थी। इस खबर के अनुसार सीबीआइ ने खुलासा किया था कि ठाकुर और चन्द्रशेखर के संबंधों का ठोस आधार नहीं मिला (इंडियान एक्सप्रेस 1 अप्रैल 1996) द्य यह सच है कि ऐसी खबरों के आधार पर, आपराधिक सांठ–गांठ को कोई ठोस मामला स्थापित नही किया जा सकता है और अक्सर ऐसी चर्चा सिर्फ वाहवाही लूटने के लिए भी की जाती है। यह भी सही है कि चुनाव में प्रचार के दौरान और वैसे भी राजनीतिज्ञों से हर तरह के लोग मिलते रहते हैं। यह अपने आप में किसी सांठ–गांठ की पुष्टि नहीं करता। मगर यह सत्य भी चिंता का विषय है कि ऐसे लोगों की शीर्षस्थ राजनीतिक पदाधिकारियों और उनके कर्मचारियों तक पहुंच होती है। मुझे यह बताने की जरूरत नहीं है कि कथित रूप से कुछ आपराधिक तत्वों की मदद करने के आरोप में सीबीआई ने बिना पर्याप्त सबूत और उचित जांच के ही कल्पनाथ राय को टाडा में गिरफ्तार कर लिया था। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय ने यह कहते हुए उन्हें बरी कर दिया कि इस बात का कोई ठोस सबूत नहीं मिलता कि मंत्री को पता था कि जिन लोगों को गेस्ट हाउस में रहने की जगह दी गई थी वे आपराधिक गतिविधियों में शामिल थे। न्यायालय ने पाया कि इस मामले में अपराध बोध की कमी थी। पूर्व में सीबीआई वालों के काम करने का तरीका ऐसा नहीं था। और न ही ऐसा अभियोग चलाए जाते थे।

लगभग इन्हीं दिनों तांत्रिक चंद्रस्वामी और कुख्यात अपराधी बबलू श्रीवास्तव के घनिष्ट संबंधों की खबर सर्खियों में रही। अन्य गतिविधियों के अलावा दाउद इब्राहिम के नजदीकी बबलू श्रीवास्तव पर मार्च 1993 में इलाहाबाद में कस्टम अफसर एलडी अरोड़ा की हत्या की साजिश करने का आरोप भी था। अखबारों के अनुसार एक अन्य मामले में दिल्ली पुलिस द्वारा चार्टशीट किए गए भरत सिंह उर्फ मुन्ना और वीरेंद्र पंत उर्फ छोटॅ तथा संजय खान उर्फ चंकी ने सीबीआई को 1994 में बताया था कि बबलू से उनकी मुलाकात चंद्रस्वामी के दिल्ली स्थित आश्रम में ही हुई थी। 1992 में संजय खान ने कथित रूप से सीबीआई को साफतौर पर बताया था कि वह ओम प्रकाश उर्फ बबलू से चंद्रस्वामी के आश्रम में ही संपर्क में आया था और वह वहां अक्सर आता था। दूसरी तरफ 7 और 27 अक्टूबर 1996 को राजीव गांधी की हत्या की परिस्थितियों की छानबीन कर रहे न्यायाधीश एमसी जैन आयोग के समक्ष चंद्रस्वामी ने शपथ पूर्वक कई महत्वपूर्ण व्यक्तियों के नाम बताए थे जिन्हें वे जानते थे या जो उनके मित्रधशिष्य थे। उन्होंने अदनान खशोगी के अपने श्सबसे अच्छे मित्रोंश में एक बताया था। उन्होंने कहा कि एक बार जब वे दक्षिणी फ्रांस में खशोगी की नौका श्नबीलाश पर थे तब श्री (रूसी) करंजिया श्री अदनानन खशोगी से मिलने आए थे। चंद्रस्वामी ने ब्रूनेई के सुलतान से भी परिचित होने का दावा किया और उन्होंने पीवी नरसिंराव, उनके बेटे पीवी राजेश्वरराव, एलिजाबेथ टेलर, बबलू श्रीवास्तव, उमा भारती, मुलायम सिंह यादव, डाक्टर सुब्रह्मण्यम स्वामी, चंद्रशेखर, आरिफ मोहम्मद खान, टीएन शेषन आदि से भी घनिष्टता का दावा किया था। उन्होंने आगे कहा, पीवी नरसिंहराव से मेरे निजी संबंधों के अलावा वर्तमान सरकार पर मेरा कोई प्रभाव नहीं है। मैं कभी–कभी प्रधानमंत्री निवास पर भी जाता है। मेरी कार प्रधानमंत्री के सरकारी निवास में सीधे ड्योढ़ी तक जाती है और प्रवेश के पहले एसपीजी इसकी जांच नहीं करती।

चंद्रशेखर के बारे में चंद्रस्वामी ने आयोग को बताया कि :

चंद्रशेखर के सत्ता में आने के 2 से 3 सप्ताह या एक महीने के बाद (दरअसल वे पंद्रह दिन बाद लौटे थे) मैं विदेश से लौटा था। डाक्टर सुब्रह्मण्यम स्वामी मुझे लेने हवाई अड्डे पर गए थे। हम दोनों हवाई अड्डे से सीधे चंद्रशेखर के भोंडसी आश्रम में गए थे।

थोड़ी देर बाद जब अदनान खशोगी यहां पहुंचे तो चंद्रशेखर के निजी सचिव ने हवाई अड्डे पर उनकी अगवानी की। चंद्रस्वामी, खशोगी व अन्य लोग वहां से सीधे चंद्रशेखर के आश्रम गए। एक अन्य रिपोर्ट के अनुसार, 1990 और अप्रैल 1992 के बीच अपराध सरगना दाउद इब्राहिम ने तीन अलग–अलग बिलों का करोड़ों रूपए का भुगतान चंद्रस्वामी को उनके एक अघोषित चौनल आईलैंड बैंक के खाते में किया था। यह महत्वपूर्ण सूचना ओम प्रकाश श्रीवास्तव उर्फ बबलू से पूछताछ के दौरान मिली थी। उसे सिंगापुर में इंटरपोल ने गिरफ्तार किया था। वहां से उसे भारत भेज दिया गया था और यहां उसे सीबीआई को सौंपा गया था। बबलू से पूछताछ में यह भी पता चला था कि दाउद इब्राहिम द्वारा एक सौदे में मुकर जाने की वजह से उसके और चंद्रस्वामी के संबंधों में काफी श्कटुताश आ गई थी। (दि हिन्दुस्तान टाइम्स 14 सितंबर 1995)। इंडियन एक्सप्रेस को दिए एक विशेष साक्षात्कार में बबलू श्रीवास्तव ने दावा किया था कि राजिन्दर जैन की कार में बम रखने वाले मामले में अपना बयान बदलने के लिए उसे पांच करोड़ रूपए की पेशकश मिली थी। अपने पिछले बयान में उसने इसके लिए चंद्रस्वामी को जिम्मदार बतया था। चंद्रास्वामी के वकील ने इस आरोप को 'बकवास' बताया था।

इन इपराधियों के दावे और उनके जवाब इतने महत्वपूर्ण नहीं हैं द्य महत्वपूर्ण है ऐसे कुख्यात अपराधियों का शीर्षस्थ राजनीतिज्ञों से घनिष्ठ संबंध। जब चंद्रास्वामी ने जैन आयोग को बताया कि वे तत्कालीन प्रधानमंत्री पीवी नरसिंह राव के सरकारी निवास पर अक्सर जाते थे और वहां तैनात सुरक्षा कर्मचारी उनकी विधिवत जांच नहीं करते थे तब तत्कालीन आंतरिक सुरक्षा राज्य मंत्री राजेश पायलट ने खुलकर मांग की थी कि चंद्रास्वामी को तुरंत गिरफ्तार किया जाना चाहिए। पायलट ने यह भी माना था कि श्इससे सरकार की विश्वसनीयता को ठेस पहुंची है। इसका खुलासा करते हुए पूर्व आंतरिक सुरक्षा मंत्री ने प्रेस को बताया कि श्सोबीआई और इसके राजनीतिक आकाओं के अनुचित कार्य व्यवहार ने न सिर्फ सरकार को शर्मिन्दा किया था बल्कि इससे यह धारणा भी बलवती होती रही थी कि कुछ उच्च पदस्थ लोग तांत्रिक के पीछे थे। उन्होंने बताया कि इससे इंकार नहीं किया जा सकता कि चंद्रास्वामी ने अदनान खशोगी जैसे अंतर्राष्ट्रीय लोगों से संबंध बना लिया था और देश की सुरक्षा के लिए खतरा बन चुके थे। मगर सरकार उनके खिलाफ कार्रवाई नहीं कर पाई क्योंकि उनके दावे के अनुसार वे सत्ताधारियों के करीबी मित्र थे। पायलट ने यह भी कहा कि चंद्रास्वामी के खिलाफ बयान देने का खामियाजा उन्हें भुगतना पड़ा। (दि हिंदुस्तान टाइम्स 4 मई 1996)। इस दौरान एकाएक राजेश पायलट को गृह मंत्रालय से हटाकर पर्यावरण मंत्रालय में भेज दिया गया था।

अन्य बातों के अलावा ऐसी स्थिति ने भी हमारी राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए खतरा पैदा कर दिया था। पर इसकी किसी ने अधिक परवाह नहीं की। सिर्फ बाहरी हमलों से ही राष्ट्रीय सुरक्षा को खतरा नहीं होता बल्कि ऐसी स्थिति से भी होता है। विदेशी एजेंसियों, खासतौर से इंटर सर्विस इंटेलिजेंस और ड्रग माफिया से साठगांठ रखने वाले संगठित आपराधिक गैंगों की शीर्षस्थ राजनीतिक अधिकारियों तक सीधी पहुंच होती है और वे अपनी आवश्यकतानुसार उनका इस्तेमाल कर सकते हैं।

दल–बदल की राजनीति और राजनीतिक अपराध :

भारतीय राज–व्यवस्था संसदीय लोकतंत्र को प्रतिबिम्बित करती है। यहाँ शासन संचालन में सत्ता पक्ष एवं विपक्ष की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। समस्त राजनीतिक दलों का यह लक्ष्य होता है कि अपनी नीतियों से जनता को प्रभावित करते हुए, चुनाव में उसका व्यापक समर्थन प्राप्त करके स्पष्ट बहमत से अपनी सत्ता स्थापित कर देश हित में, जनहित में अपनी नीतियों को लागू करें। सत्ता प्राप्ति के इस खेल में जिस राजनीतिक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त होता है, वह सत्ता पक्ष का निर्माण करता है और शेष अन्य दल विपक्ष के रूप में सत्ता पक्ष को निरंकुश बनने से रोकने एवं जनहित में शासन के समुचित संचालन में अपना सकारात्मक सहयोग प्रदान करने का महत्वपूर्ण उत्तरदायित्व निभाते हैं।

भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कुछ समय तक तो विपक्ष की भूमिका, सीमित संख्या के बल के बावजूद, प्रशंसनीय रही किन्तु बाद के दिनों में (विशेष रूप से 1967 के चतुर्थ आम चुनाव के पश्चात् विपक्षी दलों के अनेक महत्वाकांक्षी राजनीतिज्ञों में सत्ता के प्रति आकर्षण की तीव्रता परिलक्षित होने लगी। यह वह समय था, जब हिन्दस्तान के राजनीतिक रंग–मंच कर कांग्रेस पार्टी के एक छत्र प्रभाव में पराभव स्पष्ट दृ

ष्टिगोचर होने लगा और अब तक सत्ताविहीन तमाम राजनीतिज्ञों को यह आभास होने लगा कि जोड़–तोड़ आदि के माध्यम से स्वयं सत्ता में भागीदारी कर सकने में सक्षम हो सकते हैं। यह देखा गया कि ऐसे महात्वाकांक्षी राजनीतिज्ञ पद, प्रतिष्ठा एवं धन की लालसा में अपने मूल कर्तव्यों से विमुख होकेर, अनेक निर्णायात्मक अवसरों पर अपने दल के निर्देशों की अवहेलना करते हुए, अनुशासन के विरूद्ध जाकर, कुछ निहित स्वार्थों के चलते सत्ता पक्ष अथवा शक्तिशाली समूहों के साथ जुड़कर उनके सुर में सुर मिलाने लगे। सामान्य अर्थों में उनके इसी व्यवहार को दल–बदल की संज्ञा प्रदान की गई है। इसे कार्पेट क्रासिंग भी कहते है। चूंकि जनता द्वारा निर्वाचित ऐसे राजनीतिज्ञों द्वारा किया जाने वाला यह आचरण पद, प्रतिष्ठा एवं धन प्राप्ति की अभिलाषा की पृष्ठभूमि पर आधारित होता है। अतः इसे भ्रष्टाचार के अतिरिक्त और कुछ नहीं कहा जा सकता और जो राजनीतिज्ञ को अपराधी बनाने में सहायक होता हैं।

दल–बदल आज भारतीय राज–व्यवस्था के सम्मुख एक गंभीर संवैधानिक संकट को जन्म देने का कारण बन चुका है। यह अवसरवादी राजनीतिज्ञों के लिए कम से कम समय में अधिक से अधिक अर्थोपार्जन करने तथा सरकार के ऊपर, अवसर का लाभ उठाते हुए, दबाव डालकर अपने निजी हितों की पूर्ति के एक सशक्त माध्यम के रूप में सामने आया है। साथ ही इसने अपराध को एक नया आयाम दिया है। वस्तुतः दल–बदल के माध्यम से सत्ता प्राप्त करने की राजनीति ही दल–बदल की राजनीति है। इसे 'अवसरवादिता की राजनीति' भी कहते है। अवसरवादिता की राजनीति के कारण आज भारतीय राजनीति दल–बदल की राजनीति बन गई है। जो भारतीय राजनीति में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं अपराध के अनेक कारकों में से एक हैं।

स्वतंत्रता पूर्व दल–बदल की राजनीति और राजनीतिक अपराध :

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व दल–बदल भारत में उतना अभी प्रचलित नहीं था जितना सन् 1967 के सामान्य निर्वाचन के पश्चात् दिखाई पड़ा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व केन्द्रीय विधायिका में दल–बदल होते रहे। दल–बदल स्पष्ट रूप में 1937 में सामने तब अया जब श्री हाफिज मुहम्मद इब्राहिम उत्तर प्रदेश विधानसभा के लिए मुस्लिम लीग के टिकट पर निर्वाचित हुए और दल–बदल करके कांग्रेस पार्टी में सम्मिलित हो गए। श्री इब्राहिम को भारतीय राजनीति के दल–बदल के इतिहास में श्प्रथम दल–बदलश के रूप में जाना जा सकता है। श्री इब्राहिम के साथ ही साथ लगभग आधा दर्जन निर्दलीय विधायकों ने भी कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण की। इस घटना की पुनराव ति मार्च 1945 में बंगाल में देखने को मिलनी है, जहां 'ख्वाजा निजामुद्दीन' की मुस्लिम लीग सरकार के पतन का कारण नवाब बहादुर तथा उनके 15 विधायक साथियों द्वारा किया गया दल–बदल बना।

स्वतंत्रता पश्चात दल–बदल की राजनीति :

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् कांग्रेस पार्टी, व्यापक रूप से, पूरे देश में अकेली प्रमुख राजनीतिक दल के रूप में स्थापित हो गई और सत्ता की बागडोर उसके हाथ में आ गई। कांग्रेस सत्ताधारियों की सम्पन्नता और भौतिक सुख–सुविधाओं को देख कर अन्य राजनीतिक दलों के लोग उसकी तरफ आकृष्ट होने लगे। राजनीतिज्ञों में यह धारणा घर कर गई कि सत्ता ही वह सोपान है जो किसी भी अकिंचन को विपुल धनराशि का स्वामी बना सकता है। सत्ता प्राप्ति की इस लालसा ने राजनीति में नैतिकता के आदर्श को गहरी चोट पहुंचाई और भ्रष्टाचार एवं राजनीतिक अपराध को बढ़ावा दिया। सत्ता प्राप्ति के लिए तरह–तरह के साधन अपनाए जाने लगे जिनमें से एक प्रमुख साधन, दल–बदल को व्यापक स्वीकृति प्राप्त होने लगी।

दल–बदल के प्रथम चरण में कांग्रेस पार्टी के सदस्यों द्वारा सैद्धांतिक एवं व्यक्तिगत मतभेद तथा आंतरिक जोड–तोड कर दल–बदल कर के अधिक मामले अस्तित्व में आए जिनमें एक प्रमुख उदाहरण मार्च, 1948 में समाजवादी कांग्रेस पार्टी में उ0 प्र0 विधान सभा के 13 सदस्यों द्वारा आचार्य नरेन्द्र देव के नेतृत्व में पार्टी छोड़ने का है।

इसके अतिरिक्त सन् 1951 में आचार्य जे0 वी0 कृपलानी एवं रफी अहमद किदवई द्वारा कांग्रेस पार्टी की गुटबन्दी के कारण पार्टी छोड़कर किसान मजदूर पार्टी का गठन भी है।

उल्लेखनीय है कि इस अवधि में दल–बदल एकतरफा था। क्योंकि अधिकांशतया कांग्रेस पार्टी के ही सदस्य दल–बदल किया करते थे। यही नहीं इसके कारण कोई राज्य सरकार गिरी नहीं बल्कि केवल सत्ता नेतृत्व में ही परिवर्तन हुआ। जोड़–तोड़ की राजनीति के कारण ही सन् 1951 के प्रजाब में राष्ट्रपति शासन लागू हुआ। ज्ञातव्य है कि कांग्रेस पार्टी में मुख्यमंत्री पद के लिए पंजाब, मद्रास एवं उड़ीसा में व्यापक प्रतिस्पर्धा थी।

पंजाब में डॉ0 गोपीचन्द्र भार्गव को भीमसेन सच्चर ने सत्ताच्युत किया। पुनः श्री सच्चर, भार्गव द्वारा अपदस्थ किए गए। इसी कारण पंजाब में राष्ट्रपति शासन लागू हुआ। इस काल की प्रमुख बात यह थी– दल बदलने वाले व्यक्तियों ने अधिकतर नीतिगत आधार पर दल–बदल किया। उनका उद्देश्य सरकार को अपदस्थ करना नहीं था।

दल–बदल का द्वितीय चरण सन् 1952 से 1966 तक रहा। इस काल में यद्यपि कांग्रेस पार्टी से भी विधायकों ने दल–बदल किए लेकिन विशेषता यह रही कि इससे कांग्रेस पार्टी को कुछ विशेष हानि नहीं हुई। इसके विपरीत विपक्षी दलों के विधायकों के टूट कर कांग्रेस में आने से लाभ कांग्रेस को मिला। दल–बदल के कारण चार राज्य सरकारें जो कांग्रेस द्वारा शासित थीं। यथाय सन् 1952 में पूप्सू में कर्नल रघुवीर सिंह, 1954 में आंध्र प्रदेश में टी0 प्रकाशम्, 1956 में पी0 गोविन्द मेनन् एवं 1964 में आर0 शकर की सरकार अपदस्थ हुई।

इस काल में विरोधी दलों से अधिकतर विधायक कांग्रेस में आए, किन्तु दल–बदल करने वाले नेता विरोधियों को मिलाकर सरकार बनाने का साहस नहीं कर सके। इस अवधि में कुल 542 विधायकों ने दल–बदल किया जिसमें से अधिकांश निर्दल थे। कांग्रेस के पक्ष में परिवर्तन करने वाले नेताओं ने कुछ क्षेत्रीय दल, जैसे–केरल कांग्रेस, बंगाल कांग्रेस, जनतांत्रिक कांग्रेस, भारतीय क्रांति दल आदि का गठन किया।

दल–बदल का तृतीय चरण सर्वाधिक महत्वपूर्ण चरण था जो सन् 1967–1971 तक रहा। यह निम्नलिखित विशेषताओं के कारण पूर्व में हुए दल–बदल से भिन्न था।

सन् 1967 के पूर्व दल–बदल में राज्यपाल की कोई भूमिका नहीं होती थी, परंतु 1967 के पश्चात् दल–बदल पर वे भी विशेष भूमिका निभाने लगे।

दल–बदल का चतुर्थ चरण का काल 1972 से 1976 तक का रहा। इसकी विशेषता यह देखी गई कि इस बीच दल–बदल एकतरफा रहा जो कांग्रेस के लिए लाभदायक सिद्ध हुआ अर्थात् विपक्षी दलों से नेता दल–बदल कर कांग्रेस में आते रहे। परिणामस्वरूप जहां गैर–कांग्रेसी सरकारें थीं वहां कांग्रेस की सरकारें बनीं जैसे–गुजरात, मणिपुर एवं उड़ीसा।

इस अवधि में राजनीतिक अस्थिरता में कमी आई और विभिन्न प्रांतों में राष्ट्रपति शासन भी 1967–72 की तुलना में कम लागू हुआ।

दल–बदल का पंचम चरण 1977 के सामान्य निर्वाचन के पश्चात् प्रारंभ हुआ। जनता पार्टी की सरकार बनी और मोरारजी देसाई प्रधानमंत्री बने, जिन्होंने राज्य सभा के कांग्रेसी सदस्यों को जनता पार्टी में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया। दल–बदल का यह आमंत्रण न केवल केन्द्र बल्कि राज्यों में भी था।

इस अवधि की मुख्य बात यह थी कि दल–बदलुओं को मुख्यमंत्री पद भी प्राप्त हुए। जैसे वाई, सैजा जो दल–बदल कर जनता पार्टी में आए उन्हे मणिपुर का मुख्यमंत्री बनाया गया। असम में जोगिन्दर सिंह हजारिका जनता पार्टी से दल–बदल कर असम जनता दल में आए, जिन्हें मुख्यमंत्री बनाया गया। इतना ही नहीं मणिपुर के जनता पार्टी और असम जनता दल के सभी विधायक दल–बदलू ही थे। इस अवधि में सामूकि नेतृत्व की प्रवृति बलवती हुई परंतु दलों की आंतरिक गुटबंदी भी प्रबल होती गई जिसका सर्वाधिक प्रभाव जनता पार्टी पर ही पड़ा। परिणाम अंततः जनता पार्टी के पतन के रूप में दिखाई पड़ा।

दल–बदल का छठा चरण 1980 के लोकसभा के निर्वाचन से प्रारंभ हुआ इस निर्वाचन में कांग्रेस आई. को पूर्ण बहुमत प्राप्त हुआ और दल–बदल की प्रवृति में पुनः तेजी दिखाई पड़ी। फरवरी, 1980 से फरवरी 1982 तक 7 राज्य सरकारें अपदस्थ हुई। दो गैर–कांग्रेसी राज्य सरकारें कांग्रेस आई0 के प्रति वफादारं हो गई, जैसे सिक्किम में काजी लेंदुप दोरजी (जनता पार्टी) की सरकार और हरियाणा में भजन लाल (जनता पार्टी) की सरकार (1980)। इस दौरान केन्द्र में इंदिरा गांधी के नेतृत्व में कांग्रेस आई. की सरकार थी जिसने अपनी सत्ता का दुरूपयोग करते हुए दल–बदल की प्रवृति को बढ़वा देकर कई प्रांतों जैसे–असम, मणिपुर आदि में सरकार बनाने अथवा सरकार गिराने का कुस्तित खेल भी खेला। प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी का दल और प्रशासन पर पूर्ण नियंत्रित स्थापित था, परिणामस्वरूप जो दल–बदल हुए उनमें कांग्रेस ही लाभ की स्थिति में रही।

भारतीय राजनीति में भ्रष्टाचार एवं अपराध को बढ़ावा देने में दल–बदल की राजनीति :

राजनेताओं में नैतिकता का अभाव रू भारतीय राजनीति में अधिकांश खिलाड़ी सदैव सत्ता प्राप्त करने और सत्ता प्राप्त होने पर उसे किसी भी कीमत पर बनाए रखने की मनोवृत्ति पाले हुए हैं। इसे अवसरवादिता की राजनीति भी कहा जाता है। इस नीति के अन्तर्गत क्रमशः धर्मनिरपेक्ष तथा धर्म सापेक्ष, वामपंथी एवं दक्षिण पंथी,

उदारवादी एवं अनुदारवादी परस्पर विरोधी होते हुए भी संयुक्त रूप से खुले तौर पर सत्ता प्राप्ति हेतु आपस में गठबंधन करते देखे गए। जिस आसानी से वे एक दल का परित्याग कर दूसरे दल में सम्मिलित हो जाते हैं, उससे यह बात पूर्णतया स्पष्ट हो जाती है कि वे किसी राजनीतिक सिद्धांत अथवा किसी दल की राजनीतिक विचारधारा को महत्व नहीं देते है। इसके अतिरिक्त चूंकि विभिन्न दलों में विचारात्मक ध्रुवीकरण नहीं है और उनके मतभेदों का स्वरूप धुंधला है, अतः जब कोई सदस्य अपने दल से संबंध विच्छेद कर किसी अन्य दल में सम्मिलित होता है तो उसमें विचारधारा के परिवर्तन का कोई प्रश्न नहीं उठता। भारत के सभी राजनीतिक दलों के प्रत्याशियों का चयन नैतिकता, आदर्श तथा सिद्धांतों के आधार पर नहीं, बल्कि चुनाव में येन–केन–प्रकारेण उनके चुनाव जीतने की योग्यता को ध्यान में रखकर किया जाता है, ऐसी स्थिति में दल–बदल नहीं होगा यह विचार रखना अपने आप में तर्कसंगत प्रतीत नहीं होता। परिणामस्वरूप दल–बदल भी राजनीति को अपराधिकरण बनाने में सहयोग देता हैं।

प्रभवशाली नेतृत्व का अभाव रू स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय राजनीतिक परिस्थितियों में तेजी से बदलाव आया। 1977 के बाद तो राजनीति के क्षेत्र में अप्रत्याशित परिवर्तन दिखाई पड़ा, क्योंकि इस चुनाव के बाद श्रीमती इंदिरा गांधी को छोड़कर कोई भी ऐसा शिखर का व्यक्तित्व नहीं रहा जो अपने दल पर नियंत्रण रख सकता था। कांग्रेस या गैर–कांग्रेसी दलों के सभी तमाम नेता अब एक ही स्तर के है। यद्यपि 1984 में श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के बाद सन् 1985 के आम चुनाव में राजीव गांधी दो–तिहाई बहुमत से ऐतिहासिक उपलब्धि के साथ सत्ता –आसीन हुए, लेकिन वे अपने वर्चस्व को बहुत दिनों तक बनाए नहीं रह सकें। कांग्रेस के अन्दर ही वी0 पी0 सिंह के नेतृत्व में उनके खिलाफ विरोध प्रस्ताव हो गया, जो बाद में कांग्रेस को अपदस्थ करने का कारण बना।

इस प्रकार सन् 1985 के पश्चात् भारतीय राजनीति ऐसे प्रभावशाली नेताओं से वंचित हो गई जो पार्टी पर प्रभावशाली नियंत्रण रख सके। अवसरवादिता की राजनीति ने अब व्यापक रूप से स्थान ग्रहण कर लिया। परिणामतरू राजनीति को अपराधीकरण होना जोड़ पकड़ लिया।

भ्रष्टाचार आज देश के सार्वजनिक जीवन में गहराई से प्रवेश कर चुका है और विधायिका का लगभग प्रत्येक व्यक्ति इसकी गिरफ्त में है। आज राजनीतिज्ञों का एक ऐसा वर्ग बन चुका है जो राजनीति को व्यवसाय के रूप में स्थापित करने में लगा है। मानसिकता बदल रही है। ऐसे में परिवर्तन की आवश्यकता है। परिवर्तन जीवन में आत्यावश्यक है–जैसा कि नेपोलियन ने कहा है– ''व्यक्ति जो शासन जैसे महान् कार्य में लगे रहते हैं उन्हें अधिक उम्र हो जाने पर अपना पद त्याग देना चाहिए।'' भारत जैसे देश में शासन के संदर्भ में नेपोलियन की उक्ति निःसंदेह विचारणीय है। यहाँ राजनेताओं के लिए न तो किसी शैक्षिक योग्यता का निर्धारण है और न ही उम्र की कोई सीमा। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् एक ही राजनीतिक दल का लम्बे समय तक चलने वाला शासन का भी परिणाम अच्छा नहीं रहा। इससे राजनीति में अधिनायकवाद का एक वर्चस्व बढ़ा, व्यक्तिवादी राजनीति को बढ़ावा मिला एवं भ्रष्टाचार का पोषण हुआ। साथ ही जनसामान्य की शिक्षा एवं उनकी राजनीतिक सोच के विकास का मार्ग भी अवरूद्ध हुआ है।

संदर्भ स्रोत :

1. भीखू पारिख (एडीटेड) एंड बर्की, आर0 एन0 : दी मोरेलिटी ऑफ पॉलिटिक्स, जार्ज एलेन एंड अनविन लिमिटेड, लंदन, 1972 पृ0 –51–55
2. बख्शी, उपेन्द्र : दी इंडियान सुप्रीम कोर्ट एंड पॉलिटिक्स, ईस्टर्न बुक कंपनी, लखनऊ, 1980 पृ0–48–50
3. बख्शी, उपेन्द्र : ऑन दि शेम ऑफ नाइट बीडंग इन एक्टिविस्ट थाट ऑन जूडिशियल एक्टीविज्म, इंडियन बार रिब्यू, वॉल्यूए –2 (3), 1984 पृ0–65–68
4. बसु, डी0 डी0 रू लिमिटेड गवर्नमेंट एंड ज्यूडीशियल रिव्यू एस0 सी0 सरकार एंड सन्स, कोलकाता, 1972 पृ0–57–60
5. बेल, जॉन : पॉलिसी ऑर्ग्युमेन्ट्स इन ज्यूडीशियल डिसीजन्स, क्लेरेन्डन प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1983 पृ0–25–31
6. ब्रोगेन, डी0 डब्ल्यूल : पॉलिटिक्स एंड लॉ इन दि यूनाईटेड स्टेट्स यूनीवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1994 पृ0 –68–72
7. कोनोलो, ई० विलियम : पॉलिटिक्स एंड ऐम्बीगुइटी, दि युनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन प्रेस, 1967 पृ0–70–75

8. कार्डोजो, बी0 : दि नेयर ऑफ ज्येडीशियल प्रासेस, येल यूनिवर्सिटी प्रेस, हेवेन, 1921 पृ0 –80–83
9. कॉक्स, आर्चीबाल्ड : दि रोल ऑफ सुप्रीम कोर्ट इन अमेरिका गवर्नमेंट क्लेरेन्डॉन प्रेस, ऑक्सफोर्ड, 1976 पृ0–45–48
10. दास, बी, सी. : पॉलिटिक्स डेवलपमेन्ट इन इंडिया य आशीष पब्लिकेशन हाउस, नई दिल्ली, 1978 पृ0 –75–81
11. तथैव